पाषाण पंक्तियाँ

(कविताएँ)

अनुरजन पसाद सिह

१९६७

ज्ञान भारती प्रकाशन

पटना ८

PASHAN PANKTIYAN

(A Collection of poems)

By Anuranjan Prasad Singh

Price—Rupees Four only

1967

आवरण शिल्पी—श्री श्याम शर्मा, पटना आर्ट्स स्कूल
मुद्रक—जन्मभूमि प्रेस, पटना-८
संस्करण—प्रथम
प्रकाशन वर्ष—१९६७
मूल्य—विशेष संस्करण—चार रुपए
साधारण संस्करण—तीन रुपए पचास पैसे
पत्राचार का पता—द्वारा जन्मभूमि प्रेस, पटना-८

प्रकाशक

ज्ञान भारती प्रकाशन

पटना-८

पाषाण पंक्तियाँ

अनुरजन प्रसाद सिह

जीवन संगिनी को
इसलिए कि

अनुक्रम

•

वृत्त : एक

*उन्होंने 'क्षण' को 'क्षय' और समय को 'व्यय' बताकर
जीवन को अश्लील कहा।*

ज्वार, जहर का

हम करुणा के गीत
गीत की व्यथा, न जाने,
गाने को आए है कितनी बार यहाँ।

ये मेघ, मेघ की थापों पर
ये अतरिक्ष के अतर मे
कँपनेवाले सगीत,
चाँद तारों के अक्षर में विरचित
ये मौन गगन के छद,
शृ ग की मालाएँ जो भटक रही
पाने को नभ का छोर
नदी के ये फैले तटबध,
न बन पाए कोमल भुजबध
तृप्ति मेघों से बँधकर कभी।

हम अतृप्त की पीर,
पीर की कथा, न जाने,
कहने को आए हैं, कितनी बार यहाँ।

धरती के धानी आँचल पर
उग आए हैं सरसों के पीले फूल
फूल के पंखों पर जो भटक रहे
अनबुझ सपनों के चरण,
चरण के पीछे जो बज रहा
कहां पर दूर और भी दू   र
किसी का मृदुल मृदुल मजीर
हम इन्हा सभी अव्यक्तों की मधुगूँज,
गूँज से तृप्ति, न जाने,
पाने को उलझे हैं, कितनी बार यहाँ।

ये घूम-घूम कर गाँव गली हर नगर
हमें जानी-पहचानी लगती है जो डगर,
डगर के अमलतास पीपल, बरगद और नीम,
सभी परिचित से लगते,
जिनके नीचे बैठ छाँव मे
अपने ही चौडे कपाल की रेखाएँ
जोडी हमने हर बार,
सिक्त पट पर निज उँगली चला
कि जिनसे उतर सके वह चित्र,
चित्र की गरिमामय अभिव्यक्ति,
कल्पना जिसकी बुनती तद्
हृदय में छायावत् जो रूप।
हम इन्हो सभी यतिभगो के पी जहर,
जहर के प्यार, न जाने,
छदवध करने को हम,
जन्मे हैं, कितनी बार यहाँ।

•

ठहरा हुआ समय

जब से मै कट गया हूँ उन क्षणों से,
मजबूरियों के सिज्दे मे होकर भी
स्वीकार करता हूँ तुम्हारा आभार
उन क्षणो के लिए जिनने जन्म दिए
नयी मान्यताओं की स्थापनाओ को।

लगता है,
भूत में कट कर भटक गई तुम अपदस्थ प्रेयसी हो
मजबूरियों के सिज्दे मे जब मै पडा था
मेरे ऊपर से घुँघुराले बादल गुजर गए
किंतु मै कोई संदेश नही भेज सका
काल ने मुझे कालिदास घोषित नही किया
लेकिन मै अघोषित जो आगे गया
उसका आभार मै कैसे स्वीकार नही करूँ ?

ऊर्जस्वित तपित मिट्टीवाली जमीन को
सिक्त और तृप्त कर
मैने जो किंजल्क-कुसुम उगाए
उन्हे तुम भ्रम मे
लावारिस बरसाती छत्रक पुंज मत समझ लेना।

मैं जो गिरजता हूँ
यह और कम हो जाता है
तुम को पता हूँ।
भूत के क्षण में तुम मेरा वर्तमान स्वीकार करो।
रक्तिम कपोलों और अधरों ग
मुझे गर्म स्पर्श है
अरक्षित अधरों की संपूर्णता के स्पर्श में
समय के उस छोटे से ठहर गए अंतराल में
मुझे जीना बेहद पसंद है।
लेकिन वे लम्हे और अंतराल
शब्द शिला पर खुद नहीं पाते।

अनावृत पंक्तित वक्षस्थलों का समस्त अनहद नाद
मैंने सुना है उरोजों के उपधान पर माथा रखकर
किंतु समय के उन पल छिनों से हटा दिये जाने पर
मैं अब दिन और रात के प्रतिमानों में नपने लगा हूँ
फिर आगे वर्ष और युग के मापकों में
डाल कर लोग देखेंगे।

लेकिन मैं उन पल छिनों में जीता रहूँगा
इसलिए तुम्हारा आभार स्वीकार करता हूँ
हालाँकि मालिक से मैंने विनती की थी
लेकिन न दिन समय से पहले गया
और न सुबह देर से आई।

अदृश्य आकाश मे कट कर भटकती हुई पतंग सी
उस छोटी सी मुलाकात के लिए
तुम मेरा वर्तमान और मुझे लो
फिर मुलाकात हो न हो।

•

मैगनोलिया

कल जो मेरे उपमानों मे अनुभूत हुई थी
दूर बजती शिंजिनी की तरह
बगैर कोई चादर ओढे वर्णमालाओं से बुनी किसी विधा की
लेकिन विरोध की पराजय के पहले
लब्ध मान्यता को अवज्ञा दी है ।

उपमानों में ध्वनित
जिस भी गीता, रीता या रीना की शिंजिनी हो
व सब छद्म नाम है, ऐसा लगता है
मात्र शिंजिनी की अनुध्वनि सच है ।
उसके आरोह-अवरोह भी अगर टंकित हो सकते
तो बात बन सकती थी
लेकिन वाद विदों के लिए
फिर भी हो सकती है कठिनाई
क्योंकि ई० सी० ग्राफ
डा० श्री के लिए काम के हो सकते हैं
किंतु अन्य किस्म के डाक्टरों के लिए
व बच्चों के चिचिर मात्र हैं ।

ओर-छोर हीन किसी बोटैनिकल गार्डेन के
दोनों ओर कतारबद्ध वृक्षों की गोद मे सोई
खामोश सड़कों पर स्थित
अगर किसी रेस्तराँ का नाम 'मैगनोलिया' हो
तो भाड़े की प्रेयसी के साथ वहाँ इतमिनान में
चाँदी के पॉट में अच्छी कॉफी पीने को मिल सकती है

लेकिन खिड़की के कंधों पर लोटती
'मैगनोलिया' की लता नहा मिलेगी
और न आप की कदमबोसी के लिए
सीढ़ी पर बिछे 'कारपेट' पर
उसके श्वेत या हलके गुलाबी रंग के फूल।
तब 'मैगनोलिया' नाम भी
छद्म नामों की तरह निरथक लगेगा
और उसके श्वेत या हलके गुलाबी रंग के फूल
भाड़े की प्रेयसी-जैसा।

ई० सी० जी० इस युग की देन है
लेकिन यह 'मैगनोलिया' का अकारण युग भी है
जिसकी कविता-अकविता चित्रिचर को
पढ़ पाने के लिए लोग व्यर्थ परेशान नहीं
जितने कि नामधर के नाम पर आगे हों
आकाश को तान कर
धरती को बिछा
धूप खा कर हवा पीने को।
मैं यह हवा नहीं लेता
इसलिए कि लोगों को मालूम है,
हवा पीनेवाले जीव कितने जहरीले होते हैं
किंतु जहरीलों के जहर-मार भी
इस युग ने ईजाद कर लिए हैं
खतरे की अब कोई बात नहीं
तब छद्म नामों को नहीं देखें
शिंजिनी को सुनें
रेस्तराँ का 'मैगनोलिया' नाम निरर्थक हो सकता है
किंतु उसके श्वेत या गुलाबी रंग के फूल शाश्वत हैं

•

बेला फूले आधी रात

सगमर्मर की श्वेत कठोर प्रतिमा-सी
सेज पर निश्चल लेटी
परिमल-रज से आलेपित निर्वसन गौरवर्ण काया
और उसके जूड़ से फँसी हुई पलटकर
वक्षस्थल पर लोटती आधी रात के समय खिलने की प्रतीक्षा में
दोहरी बेला माला की आकल्पव्यस्त योजना,
रूमानी लग सकती है
किंतु वह निबंध का विषय नहीं बन सकती
कविता की तन्वंगी काया त्याग कर।
सगमर्मर-जैसी अनावृत्त काया में
प्रसग से कविता की बात है
और रसानुभूति परिवेश से।
यों कविता के लिए कोई भी रसानुभूति अब व्यर्थ और झूठ है,
लेकिन अनवधान स्थिति मे
क्षुधाग्रस्त क्षेत्र में
कविता के भिन्न प्रसग में
वैसी ही निर्वसन काया कठोर होकर भी
दयनीय दीखती है
जिनको व्यक्ति या सस्था से दी गई मदद
प्रचार स्वार्थ की झोली मे आती है
और सब के पीछे है दुर्गंधमय रक्तस्राव-सी छिनाल कुणाल राजनीति

चैक या थैली देते समय
तस्वीर उतरवाने की बात समझ में नहा आई
अँधेरे में रखी झोली म दान देनेवाले
प्रचारपरस्त व्यक्ति या सस्था—
गद्दी पर बैठ कर
लड्डू खाते गणेश और लक्ष्मी के सफेदपोश अभक्त भक्त—
और मयादापुरुषोत्तम राम की
फूल-मालाओं से सुसज्जित तस्वीर के नीच
आराधना मे झुकी कोई हीराबाई—
इन सब मे मुझ कोई फर्क नहा मालूम पडता
लगता है,
भगवान अगर है तो उसे पेशा से कोई नफरत नहा
इसीलिए
सगमर्मर-सी प्रतिमा के वक्षस्थल पर
जूडे से पलटकर लोटती दोहरा वेला की माला
———खिलती है आधी रात के समय—

लड्डू खाते गणश के जर्दगोश भक्तो क परिवहन
———गुजरते है आधी रात के समय—

और तभी मर्यादापुरुषोत्तम राम
फूल-मालाओं से सुसज्जित वेश्या के घर
चुपके चुपक सुनत हैं दादरा आधी रात के समय—
———चपा फूले, चमेली फूले, बेला फूले आधी रात।



आत्महत्याओं के अवशेष

'धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे 'युयुत्सा के प्रवचन ।
'वासांसि जीर्णानि यथा विहाय 'की जिजीविषा
'नवानि गृह्णाति ' मे जन्मांतर जीने का विश्वास
—सब ठीक हैं
किंतु नए जीवन के ग्रहण की बात कहाँ ?
इसी धरती पर तो ?
तब मदिर-लता के फलारिष्ट मे क्या दोष है ?
क्या दोष है जीवन की थकान से चूर
स्निग्ध-छाया के नीचे झिलमिल प्रकाश मे
उन क्षणों को पकड़ने में
जबकि बाहर अनगिनत दौड़ती
मोटर कार, बस और ट्राम के नीचे दबी
महानगरी जैसे स्वय दुर्घटनाग्रस्त हो
पीडा से छटपटाती रहती है ।

उषा किरण से धुली, पनाव सी हसीन
हौना की बेटी की अनावृत्त पृथुल जघा, पृष्ठ और नितब पर

उग आए हंटर के दाग-जैसी
दीखती हैं महानगरी की सड़कें ।

खुदकुशी-सी खूबसूरत हुगली के कछार पर,
बजाय बेतूर जाने के,
जाने कितनी बार किन-किनने त्याग दिए जीर्ण वस्त्र
नवीन वस्त्र ग्रहण करने के लिए

छोटी-छोटी खोली मे
जहाँ 'इभनिंग-इन पेरिस' की नहीं, सस्ती 'कांता' की खुशबू
नीच की नाली से उठती दुर्गंध के साथ मिलकर
एक-अजीब घुटन पैदा करती है

सप्रतीतर कविता के उपमित उपमान सा
विकता है प्यार यहाँ इस महानगरी में
और यहीं क्षण भर में
हजारों सोडा-वाटर की बोतलों के टुकड़ों में
बिखर जाते हे लोगों के आक्रोश, अभाव और असतोष ।
बस और ट्राम जलकर राख हो जाती हे क्षण भर में यहीं,
और फिर सब शांत ।
फिर लोगों का हुजूम चढने उतरने लगता है
और उसमे खो जाते हैं महाकवि, वैज्ञानिक और देशभक्त ।
हुगली का हाँफता वक्षस्थल फिर मृदु श्वास लेने लगता है
जैसे कुछ क्षण पहले हुआ ही नहीं था कुछ ।

'हावडा स्टेशन' — 'হাওড়া স্টেশন' की रक्तवर्णी निऑ
हुगली का झलमल पानी खूनी रंग-सा दीखता है
साहिल से सटकर तैरती हैं पानी में
दुर्गा और सरस्वती की निर्मजित नंगी ठठरियाँ
जैसे आत्म हत्याओं के अवशेष हों ।

◆

वृत्त : दो

सूर्योन्मुख देखकर लोगों ने कहा
तुम्हारे आगे कोई आकार नहीं
पीछे पाषाण पर खुदी मेरी लम्बी पंक्ति को
अनदेखा कर उन्होंने मेरी
मेरे अस्तित्व की कविताओं की अवज्ञा की

बदलते प्रतिमान

यह जान कर भी
कि दस्तूर ज़िंदगी ख़ूबसूरत नहीं होती,
सात घोड़ोंवाला सूरज का रथ
थम जाता है,
ख़ूबसूरती से भरे जीवन के विस्तार को,
माहगों को।

रथ के पहिए की खड़खड़ाहट
चौंका जाती है यह सुदूर तक
ऊँचे तरु शिखरों को, घोंसलों को।

सड़कों पर खामोश मोटर, ट्राम, बस और ट्रक के
'स्विच' जैसे अचानक 'ऑन' हो जाते हैं
और सारा जीवन कोलाहलमय हो जाता है बाहर।

फिर भी जब कि दायरों की सख्त पहरेदारी में
मुलायम क्षणों की फ़र्श पर
शोर व सरापा से तंग, बेहोश पड़ा आदमी,
अपने आगोश में प्रेयसी का साज-सा दबाए,

कुछ सपनाता रहता है, यह सोच कर
कि उसके लिए समय का कोई गज नहीं,
तब रथग्राहक के चाबुक की लचपचाहट,
खामोश कमरे में अगडाई लेने लगती है,
और सब कुछ बिखर जाता है,

परिधि टूट जाती है,
और समय का गज
दिन की नाप मे कटकर सामने आता है।

सतरगी वल्गावाला रथ,
अनुर्वर शिलाओं को लाघ कर,
प्यार की घिनौनी परिणति-सा
एकाकी दोनों के बीच से होकर
रोज कोलाहलमय गति के साथ गुजरता है
और तब दिन की दूसरी नाप में कटकर
सामने आता है समय का नया गज।

समय के गज की तरह
मान्यताओं की सीमा भी
लक्ष्मण-रेखा तक नहीं होती।
कुंठा, आस्था, आत्मबोध से पीडित—
चरमराता रथ,
दिन भर चलकर अभी तो रुका है,
मेट्रो-कट साँझ के समय इस महानगरी में,
जो साँझ नहीं होती बाँझ
साँझ क्या किसी की भी बाँझ नहीं होने की बात
घोषित की है विज्ञान ने भी।
मेट्रो कट साँझ के बाँझ नहीं होने की, जिसकी भी बात हो

उसमें स्वीकृति और संकेत है,
मान्यताओं के टूटते रहने का !

तब सात घोड़ोंवाले सूरज के रथ को
गुजरने दो,
खूबसूरती से पसरे जीवन के विसात पर से
आगोश में पड़ी प्रेयसी
कब तक चिपकी रहेगी साज सी !
अलस अँगड़ाइ आएगी उसे,
जब मान्यताओं का मूल्य टूटेगा ।

समय का गम,
एक-सा, दिन की नाप में रोज नहीं ठहर सकता ।

•

धड़कन की प्रतिध्वनि

तुम जब रात की धड़कन सुनते हो
तुम जब लगातार अनिद्रा से बीमार जगकर
किवाड़ के बन्द होने की चाँय-किच सुनते हो,
सुनते जब हो तुम
दूर जाते रथ के पहिए की घड़घड़ाहट
पसर कर क्षीण होती गई काई प्रतिध्वनि
एक हल्का शोरगुल—
उस रहस्यमय निस्तब्धता के क्षणों में,
आधी रात के समय,
आराम की घड़ियों में,
जब विस्मृतियाँ जगती हैं
अंतर के बंदीघरों से

सब खोयी लगनेवाली
इन पंक्तियों को पढ़ने का स्वाद तुम जान पाओगे
जिनमें मैं घोलता हूँ
(जैसे प्याले में कुछ घोलता होऊँ मैं)
अतीत की स्मृतियों की व्यथाएँ
शान्तपूर्ण संहार
कुण्ठा में बसी आत्मा की दुखद इच्छाएँ
हृदय की बीमार अघाई हुई करुणा,
और जो कुछ होना चाहिए था
वैसा नहीं हो पाने का, पश्चात्ताप,

जो साम्राज्य मेरे उपभोग के लिए बना था
उसका सत्यानाश
और किसी एक क्षण आया यह विचार
कि अगर मेरे जन्म लेने की बात टाली जा सकती।
और फिर मेरे जन्म लेने के बाद से
मेरे जीवन की वे सारी चीजें
जो सपने बनी रह गईं।

ये सारी चीजें आती हैं
गहरी निस्तब्धता के अंतराल में,
जब रात धरती के छल-कपट को
अपने ओढ़ने से ढँककर
ऊँघती रहती है।

उस समय लगता है
दुनिया की छाती से उठती धड़कन
मेरे कानों में प्रतिध्वनित होती है,
जो छेदती चली जाती है
मेरे अंतस्तल को,
और तब मैं सुनने लगता हूँ अपनी धड़कनें,
अपनी ही धड़कनों की प्रतिध्वनि।

•

आँखें डबराएगी

मेरे अन्दर अविवेकी एक
सौतेला भाई जो है,
आता है जी में जो, करता है,
भाई के नाते मैं कुछ कह नहीं सकता ।

मुझ में या आपमें
जो एक वेश्यालय है,
तृष्णाओं से भरा दर्पहीन, स्खलित
जो एक भुवन है,
उसमें शिव पत्नी की आकांक्षा
(आम्धारहित) शापित है ।

इसलिए नहीं कि मैं ढालू जमीन पर हूँ,
मैं गिरता हूँ,
इसलिए नहीं कि मैं निस्संग हूँ,
मैं मजबूर हूँ
मेरा नमना, फल लगने की बात है ।

ओस से भीगे नगे पाँव पर
मट गए पत्र जो तितली क,
म वैसे नहा कहूँ—
वसत आ गया।

अनगिनत पर्वत शिखाओं,
नदी झरने जल प्रपातों की पतली चदरिया
पेड पौधों, पगडडियों की कतारों, ज्वारा का
अपने मे समेटे जो, गुमसुम म वैठा हूँ
म कैसे नही कहूँ
कि म चिहुँक पडूँगा—
आँखें डबराएँगी।
पुस्तक की "इति" क पूर्व की पक्ति पर
खडा म अपना समीक्षक समथ हूँ।
मै दूँगा जन्म सबको—
सौतेले भाइयो
वश्यालय की तृष्णाओ
पतिता, अपाहिजों
ऋतुओं,
नदी, झरने, पेड पौधों
पगडडिया की पीडा से ऐंठी कतारो को
और
आँखें डबराएँगी
और नीर बहाएँगी।

•

काले अंगूर का स्वाद

पेड़ पौधे सुखी हैं
जिन्हें मुश्किल से इतनी सारी अनुभूति होती
जितनी हमें।
उनसे भी अधिक सुखी है कठोर शिला,
इसलिए कि उसमें कोई स्पंदन नहीं।
जीवन के प्रति अनुभूत रहो या होने से भी बेहतर
क्या कोई तरकीब होती?
चेतनाशील जीवन यापन के संवेदन से अधिक
क्या कोई और अधिक स्पष्ट होता?

जैसा हम होते हैं, वैसा नहीं होते
जो हम जानते हैं, वह उपलब्धि
कोई ले ले हमसे।
हम जिस रास्ते से चलते हैं
वह पहले से तैयार कर रखा पथ नहीं हो
जो भूत हो गया, उसका भय—

जो होनेवाला है उसका आतंक—
और   और कल मृत हो जाने का भाग—
ये सब कोई छीन ले हमसे ।

छीन ले कोई हमारे अस्तित्वपूर्ण होने का दुखदाईपन
और रात मे कुर्सी पर रखे
उजले कपड़े के प्रेत हो जाने की बात ।

जो हम नहीं जानते
जिसकी मुश्किल से शंका है
वह कोई हर ले हमसे ,
क्योंकि रक्त बिंदु की हर दौर
ताजे अंगूर के रुआव सी ललचाती है हमे ।
हम जीना चाहते हैं
क्योंकि 'किडनी' का 'फंक्सन' अभी ठीक है ।
अस्पतालवालों का झूठ बोलने की
अमूमन आदत है ।

वृत्त : तीन

मेरे नाम की तख्ती से
कुछ अक्षर खिसका कर
लोगों ने मेरे नाम का गलत मानी किया

तुम और मैं

जितनी बार मुट्ठी बाँधी
उतनी बार जिसकी अँगुलियों के गाम से
सब कुछ बह गया—फिसलता गया
पर न हैं ।

खुशी में   दुख में
हँसी में   रुदन में
नींद में   जागरण में
चलने में   दुर्गम में
जब भी जिसका साथ माँगा
और बीमार हालत की बेचैन घड़ियों में
जब भी जिसकी बाहों का फैलाव चाहा
और जो नहीं मिला
वह तुम हो ।

•

अकिंचन माँग

अतीत के माधुर्य तुम मुझ दे दो
मैं भविष्य जी लूँगा।
वर्तमान तुम जियो, ईर्ष्या नहीं होगी।

छंद की वर्णमालाएँ तुम रख लो
पर विगत गीत की गूँज
जो फूलों, कूलों, वन बागीचों, तडागों पर
फैली हुई है मुझ दे दो
उसम अपने प्राणों को ध्वनित कर
मैं किसी उदासी भरी शाम का
दूर बजते किसी मंदिर क
घंटे घड़ियाल की झंकृति में खो जाऊँगा।

तुम्हारे चित्रों की तूलिका
और रंगों की अन्विति मैं नहीं माँगता
किंतु उनकी गरिमा मंडिता अभिव्यक्ति
तुम मुझे दे दो।
म अपनी 'मोना' के अधरों पर
अमर हो जाऊँगा।

•

अट्ठाईस

मानो या न मानो

हवा की मंद पजानी ने चूमा था
तो वह चहकने लगी थी,
तुम नहीं मानोगी।

जिन ताड़ फूल की डाली को झुका
पँखुरियों से अपने गालों को सहला कर
मैंने पाया है शीतल स्पर्श,
तुम नहीं समझोगी।

मधुवन में रोककर पुरवैया को
मैंने सुना है नया गीत
तुम नहीं स्वीकारोगी।

वर्षा की फुहारों में घिरकर
फँसा रहा बंदी-सा कसमकश भुजपाश में
तुम नहीं पतियाओगी।

•

किन्तु खुशबू से भरा ।
कल जो तुम्हारा पत्र आया था
यह तो सच है ।
मैंने जिसे बार-बार चूमा है
उतनी ही बार तुम्हें हिचकी आई होगी
यह तो तुम मानोगी ।



बेला और गुलाब

आज उनके आने की बात थी,
नहीं आए।
आज फलक पर
सितारों के चमकने की बात थी
नहीं चमके।
दुलहन बननेवाली आज की रात थी।
ये सब कुछ नहीं हुआ
तो इससे मैं खफा क्यों हूँ?
उस दिन जब घुप्प अँधेरी रात
आयी थी
तो मैंने कहा था कहाँ
कि सितारो तुम चमको।

रात को बताया था कहीं
कि तुम अपनी गाड़ी में सलम गिटारे लगा कर नाचो।
आज उनके आने की बात थी
नहीं आए।
आएँगे,
क्योंकि मुझ अभी भी जीने का शौक है
और मैं अभी भी खोंसता हूँ लाल गुलाब
अपने कोट क 'बटन होल' में
और
पत्तियों लगा
बेला का फूल
मेरे हाथ म
वणीसंहार क लिए
प्रतीक्षित।

•

अनजाने, अनचीन्हे

पलकों के बाँध तोड़
मन की सब गाँठ खोल
मत मिलना, मत खिलना
तुम जो हो, दूर बहुत दूर कहीं,
अनजाने, अनचीन्हे।

खिड़की के कंध पर
लोट रही डाल किसी फूल की,
स्पंदित कर जिसको जाती है पुरवैया
मलमल-से परदे को सिहरा कर।
सुबह-सुबह नींद उचट जाती है
भावों के जोड़ बिखर जाते हैं।
सपनों के तम को तुम चीरकर
मत खुलना, मत जुड़ना,
मेरे किसी छन्द के अनागत तुम, दूर जो
अनदेखे, अनजाने।

छत पर की छइयाँ के नीचे
झुकी हुई बदली में
छिपी हुई रात बहुत दूर की,
खींच कहाँ पार लिए जाती है,
बाँध लिए जाती है बूँद की फुहार।
जल के संग दूर कोई जाता है
डूब सभी जाते हैं कूल और कगार।
हिम के उस पार मानसर से तुम
हंस मेरे,
उड़कर तुम मत आना, मत मिलना,
मेरे मधुर सपनों के चित्र तुम
बिन उभरे, बिन सँभरे।

•

वृत्त : चार

'सत्य अप्रिय' के हथियार से भयाक्रांत कर
उन्होंने मुझे असत्य-सत्य का प्रतिकार करने से रोका 'रोकोका'

आज दोपहर एक बहुत अच्छे,
बड़े ईमानदार आदमी के अस्थि घट का
जुलूस जा रहा था।

दर्शन के इक्के दुक्के पथ-पाथी लोग
दर्द में शरीक थे, जुलूस में रहा।
अच्छे आदमी की लाश भी नीलाम होती है
मुँहमाँगा दाम बोलकर।

यंत्र से प्रचारित रामधुन
क्षीण से क्षीणतर होकर अस्पष्ट हो गए।
शान्ति को प्रचार से क्या वास्ता ?
वह तो शब्द के भंडार लूट लेता है
मृत्यु तो हमारा अस्तित्व ज्ञान छीन लेती है
सदा के लिए विदा हो गई
प्रयसी के कसीदा की कतरन में
अनतक अटकी सुई के अचानक चुभ जाने पर
कवि पास्तरनाक को अपने वर्तमान का बोध हुआ था

राजस्थान होटल के बाहर से
गुजरते जुलूस से कट कर
अंदर आए व्यक्ति की काफी के प्याले पर
धुआँ फिर घिरने लगा था,
सिगरेट के चक्रवातों में किश्ती डूब चुकी थी।

आज फिर रात अँधेरे का जहर खाकर
पिछले पहर सुबह को मर जाएगी
और उस पर सफेद कफन डालकर
प्रभात फिर सब को नया मुखौटा बाँध देगा
एक नया अस्थि घट ले जाने के लिए!

◆

क्रास पर झूलता ईसा मसीह

अनिष्ट के भय से
हमने दर्शन होने पर दोनों हाथ जोड दिए।
प्रतिकार के लिए हमने मूर्तियाँ बनाई,
इस विश्वास के साथ,
कि कभी तो इन मूर्तियों में कुमारगिरि जगेगा।

हमे मंदिर बनवाने को मजबूर किया गया।
हमने लतालिंगित तोरण से सजा उन्हे निर्मित किया
कि प्रायश्चित्त के लिए
कभी तो उसे पवित्र स्थान समझा जाएगा।

हमने प्रशस्ति के लिए
सदविवेक के विरुद्ध अपने शब्द बेचे।
समानधर्मा ने गालियाँ दी हमे
और दाम जो मिला उसमें खोटे सिक्के निकले।

हम जुबान सीकर
गलत प्रवचनों को पीते रहे।
परहेज की नसीहत पा वज्मेनशा को
न जाने कितनी बद परहेनियाँ देखी

माना कि हमारी पीठ पर चाबुक के निशान उगाकर
तुम चाँद और मंगल पर पहुँच चुके होगे,
किंतु हमारी अपनी मेधावी संतान
तब तक धरती पर आत्म हत्या कर चुकी होगी
और वैज्ञानिक, कवि और योद्धा को
जन्म देनेवाली मा अपनी कोख
बाजार में कलंकित कर चुकी होगी।

समय आ गया कि हर की गहराई नापनी होगी
निकष पर सोना परखा जाएगा।
तुम्हारे कलुष मन के विष
इस बार हम सुकरात को नहीं पीने देंगे।
क्रॉस पर कबतक झूलता रहेगा ईसा मसीह ?

•

'शाम-ए-अवध'

यह 'शाम ए-अवध की बात है दोस्त,
जो 'एयर-कूल्ड' कपूर होटल के भीतर
दीवार पर खुमारी में स्कर्ट पहन दीखती है

कब्र में साया वाजिद अलीशाह अब भी
देखता रहता है लोगों को भरमाते
अपनी भूल भुलैया मे
जिसकी छाती पर फफोले फूट गए हैं।
'गाइड' ने कहा, खा लिए सब पैसे
'इंजिनियरों और ठीकदारों ने।
सरकार का दोष नहीं।
वह तो अब भी यायावरों से वसूलती है पैसे
मरम्मत के लिए।

'शाम ए-अवध' का गौरव
तो देखा हमने 'रेजिडेंसी' मे,
जहाँ अब भी वाजिद अलीशाह और उसके साथी
'एनेमी' घोषित हैं संगमर्मरी पत्थरों पर
आजादी की लड़ाई शुरू हुई सन् अट्ठारह सौ सत्तावन में
यह बकवास है।
पढ़े कोई जाकर यह 'रेजिडेंसी' के खंडहरों में।

शहीदों के दयनीय स्मारक पर
जाने क्यों आया था गुस्सा गोमती को
कुछ साल पहले निगल जाने को
अपने गर्भ मे 'एनेमी' का यह कलंक ।

नवाव-ए-अवध के इमामबाड़े ने भी इसी साल
सोचा था डूब मरने को गोमती के जल-प्लावन में ।
इमामबाड़े का निर्माण किया था
वाजिद अलीशाह ने अकाल पीड़ितों क सहायतार्थ
तब तक सीख नहीं पाया था आदमी
अकाल से आक्रांत समय में
नवाबी खरीदना ईमान बचकर ।

तो हम 'शाम-ए अवध' की बात कर रहे थे दोस्त ।
न अवध जैसी कोइ चीज है अब
और शाम तो कबकी कर चुकी खुदकुशी
हजरतगंज की सड़क पर स्थित 'कपूर' होटल में

खुदकुशी की बात नवाब को भाई नही थी
फिरंगी के हाथ जहर के प्याले को देखकर
कहा था वाजिद अलीशाह ने
कि जहर खाकर तो पश्चिम मे डूबता है आफताब
वाजिद अलीशाह के तो बगल से गुजार दो एक गर्दिन को
और वह खुद ही गुजर जाएगा इस दुनिया से ।

जहर खाकर मर गइ अवध की शाम उसी दिन
अभी तो 'शाम ए-अवध' की लाश है 'कपूर' होटल में
अवध का लिबास उतारा हुआ, स्कर्ट पहने ।



नेपालिस

सर्प-दंश

खत पर
उनके डाक-घर की मुहर लगने के पहले
जा यमुना की जल-धारा मे समर्पित हो गई
वह उनकी प्रेमिका थी।

हिम के सर्प-दंश से
मुर्दा होगई जाड़े की शाम को
जब ढुलकने ही वाले थे कुछ शब्द
उनकी कलम की नोक से,
आई जो अनागत-सी
केंचुल बदल कर कहती हुई—
आत्महत्या फरेब थी
वह उनकी नायिका थी।

हकीमी किताबों में
डूबा हुआ छोड़ उन्हें
चली जो गई अभी
"एयर होस्टस" की ड्यूटी पर

कोलाहल से दूर
जमीन से कट कर हवा मे
वह उनकी पडोसिन थी।

करतब और कृति में शोहरत पा
प्रचारक के मच पर आहत हो
छिपा छिपा क्लीव जो था,
वह उनका नायक था।

ये प्रेमिका, ये नायिका, ये पडोसिन, ये नायक
जो क्लीव हैं वे सब तुम हो।
म तो सबल हूँ, सभी दशों का महा मत्र।

•

हमारा अपना

यह जो नया है, धरा पर, गगन मे
गगन के सघन बादलों के परे भी
हमारा है।

रूमानी खंभों, कंगूरों, प्राचीरों के पार्श्व में
नया नित जो कुछ हमने उठाया
हमारा है।

उनींदी पलकों की
लाल-लाल डोरी के पलनों पर
जिन नए बिंदुओं को दुलराया हमने,
हमारा है।

माना कि तुमने दिया था स्वर
पर साधा है हमने
,सुरों को मिलाकर जो गाया है हमने,
हमारा है।

धारा के आगे की राह को काट कर
नदी के बहाव को हमने सँवारा जो,
हमारा है।

मेघ के बेटों का
मादल बजाना सिखाया जो हमने,
हमारा है।

वर्षा की बेटी को
साँझ, सुबह, आधी रात
पाँवों मे झाझर झमकाया है हमने
लहरों को ताल दिए   टलम लहल
कूलों को छाँह दिए   सन सन मन
फूलो को बाँह
और शूलो को ठाव दिए अतस्तल
नैनों को गीत दिए   छल छल छल
यह सब हमारा है।

निज मे मे देकर जो सिरजा है हमने
वह बेटा हमारा है।
हिमालय की बर्फानी चोटी जो लाल है
वह खून हमारा है।

इन नदियों को, झरनों को, सागर-समुदर को
बाँधा जो हमने
वह शौर्य हमारा है,
यह हवा, यह गगन
गगन के परे लोक और लोक तक को
जो नापा है हमने
वह गज हमारा है,

यह दूरी जो सिमटी है, समय जो सिकुड़ा है
वह युग जो है हम में, हम जो है युग में
वह सब हमारा है।

•

छीपालिस

वृत्त : पाँच

मेरे व्यक्तित्व को काँच समझ कर
उन्होंने अपनी तस्वीर उसमें देखी
और तअज्जुबात ज़ाहिर की

नयी निर्मिति

अरुण-शिखा की हाँक ने
जिस दिन तुम्हें धोखा दिया,
उस दिन तुम्हारे पिता ब्रह्मा की सर्वश्रेष्ठ कृति
जम कर पत्थर हो गई
और तब से आदमी उसकी अनुकृति
अपने उच्छ्वासों की छेनी से
अजंता की गुफाओं में,
कोणार्क के मंदिरों, दीवारों, स्वर्ण कपाटों, कलशों में
खोद रहा है।
तुम अपनी पाषाणी को जीवित करो
अपना अभिशाप उतारो
मेरा स्पर्श लो।

इसलिए कि तुम महत्त्वाकांक्षी हो,
दलों में विभक्त होकर सागर को मथ दोगे
किंतु तुम्हारी मथनी के शिखर पर
तुम्हारी इच्छाओं के फन होंगे
और चरणों में सागर की उद्‌वेलित लहरें
जो द्वेष उगलेंगी तो उसे कौन पिएगा?
मेरे भाल पर चाँद है।
तुम उसकी सुधा लो।

उत्तथाम

अधूरी कथा सुनकर
मं तुम्हें फिर नहीं जन्म लेने दूँगा,
नहीं तो ये महारथी फिर घेरकर
तुम्हारा वध कर देंगे।
मं प्रतिशोध के लिए बारबार महार नहा रचा सकता
तुम मुझ पहचानते नहीं ?
मं तुम्हारा पिता हूँ,
तुम मेरी व्यथा-कथा लो।

तुम चाँद पर उतर गए तो इससे क्या हुआ ?
तुम अपना विपाक्त मस्तिष्क और विद्वेषी हृदय
वहाँ भी साथ लेते जाओगे।
सीमा, सिद्धांत और समर की
जब वहाँ भी विजय होगी
तो विज्ञान अपने अधरों पर हँसी ले
आँखों से अजस्र धार बहाएगा
और मा अपने गर्भ में
वैज्ञानिक पुत्र की हत्या कर देगी।
मैं तुम्हें विपाक्त मस्तिष्क और विद्वेषी हृदय लेकर
वहाँ नहीं जाने दूँगा

मैं द्रष्टा, स्रष्टा और ब्रह्मा हूँ।
मैं तुम्हें नई निर्मिति दूँगा
तुम मेरी चाक पर चढ़ो
तुम मेरी चाक पर चढ़ो, चाक पर चढ़ो।
मं तुम्हें नई निर्मिति दूँगा।

•

कैनवास

नीम के पेड़ के पीछे—
चाँदी का नया वह कटोरा है,
उसे तुम अपनी तराज़ू पर
वज़न दो, माप दो।

गगन के तारे हीरे की कील हैं—
उसे तुम करीने से
अपने कैनवास पर
ठोको भी।

नीली सतह पर ये बादल—
साबुन के फेन हैं
उनसे तुम मैल निज
काटो भी।

मेघों के बीच चपल चमकी यह बिजली—
भाल पर कौंधी कहाँ दर्द की रेखा है
उसकी तुम पीड़ा
कुछ भोगो भी।

नही तो, यह चाँदी का वटखरा,
हीरे की कील,
साबुन के फेन,
दर्द की रेखा
सब स्टेज के नकाब हैं,
बाजार से जिनको तुम
उधार ले सकते हो।

सेतु मेरे हेतु

सेतु मेरे हेतु, कहते लोग,
जो तुमने बनाए, टूटने दो ।
दिया जो तुमने जलाया सेतु पर
तुम स्नेह उसको दो नहीं
तुम दो नहा शीर्षक उसे निज पंक्ति दो ।

तुम्हारे सेतु के स्तंभ सह सकते नहीं
आघात धारा की रवानी के
दायरे में बंद नीले बल्ब के नीचे
रचाए बेसबब चुप्पी रहो मत ।
तुम उसे दो मुखरता परिवेश की,
अपनी हमारी दग्ध पीड़ा की
क्षुधा कुंठा दबी विक्षुब्ध धारा की ।

घास को तुम खेत दो ।
तुम लहलहाती फसल दो ।
मत दो उसे आराम से बैठ कहीं चुप
बंद कमरों के मुलायम क्षण ।

हवा को तुम द्वार दो।

दृष्टि को आकाश दो।

कच्चे खिंचाव के बने इन सेतुओं को टूटने दो

दो दिया तुमने अकेला सेतु जो

फिर द्वार आँगन के परे भी

नदी जंगल खेत फैली घाटियों तक

पसरता है आ रहा

लहरता तपित प्रकाश

लेकर हाथ में नक्षत्र ग्रह आकाश

•

तूफानी दरिया, चाँद और आकाश

गगा की छाती पर
रग आए है छाइ रग के दाग ।
मनहूस सुदा हवा का सगीत
जैसे सुर म उतर गया है ।

तूफानी दरिया क उम पार
एक मुर्झाए पीले पात की तरह
फेंक दिया गया है चाँद ।
पैले पीले बालू के तट से
बँधी है छोटी बडी अनेक नावें ।

अधखुले पाल छितराए पतवार
बाँस बल्ले, नाव घर से उठते धुएँ
बडी सफाई से
किसी न कसीदा काट दिया है ।

दरिया की छाती पर बहते
पेड या छत या शव क ऊपर
आसमान मे बहुत स कौए, चील आदि चीखत हैं ।
लगता है
उजले आकाश की छत म
लगा दिए गए हैं
काले छोटे छोटे पिक्चर काट कर !

•

खोल दो तुम ग्रंथि

खोल दो तुम ग्रंथि अपनी,
बाँध सकता नहीं
मन क क्षणों में से कुछ वहाँ
क्योंकि मेरी जिद अलग है ।

मैं नाप लेता व्योम, वारिधि, क्षितिज के विस्तार
अपनी नजर मे म बाध लेता हूँ,
उत्ताल लहरें शख सीपी ज्वार को ।
इसलिए मैं नाप दूँ कैसे
तुम्हारी राह की दूरी ?
क्योंकि मेरी नजर का
वह मापवाला यत्र अलग है ।

मेरे वृत्त का जो केंद्र है
उससे नही है खिंच सका अबतक कोई वह चाप
जिस पर सोचकर
विज्ञान कुछ देता सरल फल ।
मै लाचार हूँ, निज मे सफल ।
इसलिए म खाच दूँ तुम तक कहाँ
वह कौन सी रेखा
जो फिर घूम कर कुछ घेर लेती स्मरन
क्योंकि मेरे कन्द्र से
हर घेर की वह हद अलग है ।

•

छप्पन

हस्ताक्षर

मेरे नाम की तख्ती से
कुछ अक्षर खिसका कर
लोगों ने मेरे नाम का गलत मानी किया ।

मेरे व्यक्तित्व को काँच समझ कर
उन्होने अपनी तस्वीर उसमे देखी
और तडाल्लताडा तिरिड की ।

नजूमी ने जब मुझे तगडा तार्किक कहा,
लोगा ने मुझ पर दुराग्रह
और झूठी आलोचना का झामट आरोप थोप दिया ।

'सत्य अप्रिय' के हथियार से भयाक्रात कर
उन्होंने मुझे असत्य-सत्य का प्रतिकार करने से राका 'रोकाको
चुप्पी साधे रहने को 'गोल्ड' बता कर
भद्रों ने चुपचाप स्वार्थ निहित साधा किया ।

सूर्योन्मुख देख कर लागों ने कहा,
तुम्हारे आगे कोई आकार नहीं ।
पीछे, पाषाण पर खुदी मेरी लम्बी पंक्ति को
अनदेखा कर उन्हाने मेरी,
मेरे अस्तित्व की कविताओ की अवज्ञा की ।

अपने मित्रों का 'इस्टीमेट' वाचित कर
लोगों ने कहा,
तुम 'मन और मानस' बन कर
उसे न्याय की सजा दो।

'आकंठ आहार' का जल और बीज करार कर
दोस्तों ने मुझे 'वीतराग' और दुर्बल 'बनवासी' कहा
लेकिन मेरी कविल ऋचाएँ उनको
कुडमगन दहकाली का रहा लगा।

उन्होंने 'क्षण' को 'क्षय' और 'समय' का 'व्यय' बताकर
जीवन को अश्लील कहा,
किन्तु मैं क्षणों को जीता हूँ और समय को भोगता हूँ
यह मैं उन्हें कैसे समझाऊँ
यह मैं उनसे कैसे कहूँ कि
मैं जहाँ हूँ, निःसन्देह—
मुझ को इसकी

शिलालेख का कुटज-कल्प

'पाषाण पंक्तियाँ' का अपाक्तेय संगतराश कवि शिला-शिल्पी होने की शीर्षक-घोषणा के साथ कुटज-किंजल्क-पेशल रसज्ञता की उपचिति का सामाजिक भी है। पत्थरों पर अपने उद्रिक्त क्षणों को उत्कीर्ण करने की शक्ति और महत्वाकांक्षा का यह कवि अपनी शिलीभूत अभिव्यक्तियों के कारण किसी सम्राट के शिलालेख-सा कालजयी बनने की सभावना रखता है तो विघटित मान-काल में स्तोक-स्खलित आलोचना की अर्हता भी।

काल से खंडित क्षणों का अश्मानुलेप, काल के काले पत्थर पर उजले क्षणों की चमेली, गतिशीलता से खींच कर इतिहास-स्तम्भों पर ठहरा हुआ क्षण, काल की धारा से विच्छिन्न पुष्करिणी के सौंदर्य का क्षण, पुष्करिणी में उत्पन्न शतदल पर चमकते जलबिंदु-क्षण, पाषाण पर खुदे खुरदुरे-से क्षण—इन क्षणों के अक्षर एकत्र होकर वाक्यपदीय प्रतिमान पर पंक्ति बन गए।

क्षण विलक्षण है, बर्फ की डली है, वाष्प का टुकड़ा है और मिश्रित अनुभूतियों का कॉकटेल भी। ये क्षण 'कालो-निरवधि' के गत्यपेतत्त्व भी प्रमाणित करते हैं।

'मैगनोलिया' की क्षणकोष पत्थरी पर भाडे की प्रेयसी के साथ 'कविता अकविता के चिचिर' पर विचार करनेवाला कवि इतर मनस्क होता हुआ अतत दिक पर सोकर आकाश को ओढ लेता है पर हवा नहीं पीता।

अव्यय समय और अक्षय क्षण के वितुक ध्वनि तंतु से बुने आसन पर बैठा गुफावासी कवि 'फेनिल-ऋचाओं', में अपनी कूटस्थ कथा का कहीं आख्यान, कहीं सगायन और कहीं उपदेश करता है।

'पाषाण पंक्तियाँ' उदग्र स्तंभों पर उत्कीर्ण हैं जो दिक से अधिक काल का मान प्राप्त करेंगी।

पटना विश्वविद्यालय,
पटना

—निशांतकेतु